पेरिस
अप्रील ५, २००८

सन्देश संख्या १३६

कैलिफोर्नियाई भक्त का प्रेम

प्रिय गुरूजी,

अश्रुपुरित नेत्रों से आपका सुन्दर ई–मेल पढ़ा । मुझे अत्यन्त खुशी है कि गुरूजी के शरीर में साईटिका–दर्द कम हुआ है ।

आपकी मित्रता एवं करुणा के लिए कृतज्ञ हूँ । इस दुःख एवं उदासी की घड़ी में भी इतना प्रेम हो सकता है – यह बात समझ में आई ।

यह शरीर चाहता है कि मन के होते हुए भी, स्वास्थ्य लाभ एवं मिलन के माध्यम से कृपा घटित हो।

आपका ई–मेल मिलना वैसा ही है जैसे सर्दी के बाद सूर्य की गरमी का मिलना ।

एक चिड़िया केवल गीत गा सकती है । कृतज्ञता के रूप में निकली यह कविता रूपी गीत है । इसे प्रेम एवं भक्ति के साथ भेजा जा रहा है ।

वियोग

(१)

जब मैं आपके पास न होऊँ,
दीर्घतम दूरी भी मैं तय कर लूँ,
उच्चतम चोटी पर चढ़ जाऊँ,
तैरकर सागर पार कर लूँ,
हे प्रभु मेरे, आपके पवित्र चरण–स्पर्श के लिए ।
यदि मैं आपको न देख पाऊँ,
आपकी सबसे बड़ी प्रतिमा खड़ी कर लूँ,
सम्मान में आपके पवित्रतम स्थान बना डालूँ,
कितनी प्रतीक्षा? कितना कष्ट?
हे प्रभु मेरे, मैं और सबकुछ करूँ, आपके दर्शन के लिए ।
मैं आपका ही गीत गाऊँ ।
आपके नामों की ही प्रार्थना करूँ,
हे प्रभु मेरे, मैं आपका परमप्रिय (सन्त) बन जाऊँ.....

(२)

मरा हजारों बार जीवन में
सुख में, दुःख में और पाण्डित्य–प्रदर्शन में,
स्वप्न के अन्दर असंख्य स्वप्नों में.....
और की दौड़ में और अन्तहीन संघर्ष में .....
हे प्रभु मेरे, तब क्यों नहीं मैं आपके चरणों में करता विश्राम?
मैं शाश्वत–जीवन जीना चाहा –
थे गीत सुमधुर और नृत्य लुभावने,
बनवाये मन्दिर और पाला–पोषा पुरोहितों को,
जीत लिया जगत और मार डाला पापियों को,
हे प्रभु मेरे, तब क्यों नहीं मैं आपके दर्शन कर पाता?
हजारों यात्रायें कीं मैंने.....
गाये आपके गीत, जीवन में और मृत्यु में
हे सन्तों के सन्त, हे प्रभु मेरे, कहाँ हैं आप.....

(३)

हे, स्वप्नों के स्वप्न,
हे, मिथकों के मिथक,
टूट गया था मेरा हृदय,
जुट गया वह तब,
सब कुछ देख लिया और
सब कुछ कह दिया आपने जब ।
क्योंकि आपने जब उत्तर दिया,
वह गीत मैं ही था जिसे मैं गा रहा था
वह सागर मैं ही था जिसके लिए मैं पूजा कर रहा था ।
जय गुरू प्रक्रिया ।

प्रिय भक्त,

आपकी जो भी शाब्दिक अभिव्यक्ति हो, आपके ध्यानशील शून्यता में, कोई विभाजन नहीं है क्योंकि सभी पहचानें समाप्त हो चुकी हैं और इसलिए गुरू प्रक्रिया और भक्त–प्रक्रिया में कोई भेद नहीं है । ध्यान में शून्यता होती है और वह आपके शरीर में घटित हो रही है । दिन में, यह शून्यता भूतकाल को विचार के रूप में उपयोग करती है । किन्तु रात्रि में, नींद भूतकाल को भी शून्य कर देती है और तभी आप उस जीवन का स्पर्श कर पाते हैं जो समयातीत है ।

।। जय गुरु, जय भक्त ।।